32

मेरे स्वर्णाभूषणों की रक्षा

मैंने पूर्व प्रसंग में अपने विविध व्यापारों की शृंखला गिनायी है। मैं अपने बदलते हुए व्यापारों में वांछित सफलता नहीं पा सका उसका एक कारण तो मेरे स्वभाव का दोष ही है। मैं किसी भी व्यक्ति पर सहज ही विश्वास कर लेता हूँ। यह दोष मेरे जन्मदाता पिता में भी था। उन्होंने भी अनेक प्रकार के व्यापार किये थे परंतु किसी में भी जो सफलता नहीं पा सके थे उसका एक मात्र कारण था, सहज विश्वास करने के कारण ठगा जाना। परंतु वे संपन्न संयुक्त परिवार के एक अंग थे इसलिए उनकी व्यापारिक विफलताओं का विशेष प्रभाव नहीं होता था। परंतु मैं तो विभाजन के बाद अपने परिवार का मुखिया और एक मात्र वयस्क सदस्य था। मेरी हानि तो मुझे संकट में डाल दे सकती थी। यह ईश्वर की असीम कृपा थी कि मेरी अकुशलता, लापरवाही और दूसरों पर सहज ही विश्वास कर लेने की प्रवृत्ति के बावजूद मुझे अपने विविध व्यापारों में किसी बड़ी हानि का या आर्थिक संकट का सामना नहीं करना पड़ा। आत्मिक रूप से तो मैं सदैव अपने सृजन से जुड़ा था अतः मेरे निरंतर प्रवहमान कृतित्व ने और उस पर मिलनेवाली मित्रों की उदार प्रशंसाओं ने मुझे सदैव किसी प्रकार के भी मानसिक आघात से दूर रक्खा था। एक-दो बार तो मुझे ऐसा प्रत्यक्ष अनुभव हुआ है जैसे साक्षात ईश्वर मेरी सहायता कर रहा है। तुलसीदास ने लिखा है, **जाहि भरोसे सोइये, डारि गोद में शीश। तुलसी ताके प्राण को रखवारो जगदीश।'**

अब मैं बस का परमिट पाने की चमत्कारिक घटना जैसी ही अपने जीवन की एक अन्य चमत्कारिक घटना का वर्णन करने जा रहा हूँ जिसमें भगवान ने जिस ढंग से मेरे स्वर्णभंडार की रक्षा की, उसे कोई चाहे तो संयोग कह सकता है, परंतु मैं तो ईश्वर की कृपा का चमत्कार ही मानता हूँ। वह घटना इस प्रकार है —

मैंने सोना-चाँदी की दुकान जिस व्यक्ति की साझेदारी में की थी, उसका किशोर पुत्र चोर-वृत्ति का था। वह मेरे घर के अंदर आता-जाता रहता था अतः उसे कहाँ क्या रक्खा है इसका पूरा पता था। मेरे घर के दूसरे तल्ले पर अंदर

के कमरे में एक कोठरी थी जिसमें एक बड़ी तिजोरी थी। उसीमें सारे गहने रहते थे। उस लड़के को इस बात का पता था। मेरा एक मित्र पुस्तक-प्रकाशक एक साहित्यिक पुस्तक पर मेरी सम्मति लेना चाहता था और इसके लिए कई बार वह मेरे पास आकर लौट गया था। मैं आलस्यवश निरंतर उसे टालता आ रहा था। एक दिन मैंने मुरारजी देसाई की, जो उस समय भारत सरकार के अर्थमंत्री थे, शासकीय कार्यप्रणाली के संबंध में सुना कि वे किसी फाइल पर अपने निर्णय को लाल फीताशाही के हवाले नहीं करते हैं। वे उस फाइल से संबंधित प्रत्येक अधिकारी को समस्त संबंधित कागजों के साथ एक निश्चित तिथि पर बुला लेते हैं और उसी समय अंतिम निर्णय कर देते हैं। उसे अनिर्णीत नहीं छोड़ते। रात में मैं अपने पिता के हिस्से के अपने मकान में स्थित होटल में बैठा था कि वह व्यक्ति पुनः मेरी सम्मति के लिए आया। मैंने उससे कहा कि मैं अब मुरारजी देसाई की पद्धति प्रत्येक कार्य में अपनाऊँगा। जो करना है उसे तुरत कर दूँगा और जो नहीं करना है उस पर तुरत 'ना' कर दूँगा। चूंकि मुझे सम्मति देने में आपत्ति नहीं है और मैं आलस्यवश ही कई महीनों से टालता आ रहा हूँ, इसलिए आज ही मैं इस कार्य को कर दूँगा चाहे कितना भी विलंब हो जाय। होटल का व्यापार भी मैंने साझे में चला रक्खा था जिसे और लोग सँभालते थे परंतु मैं रात के समय वहाँ बैठ जाता था जिसके कारण मुझसे मिलनेवालों की बैठक वहाँ जम जाती थी। बैठक समाप्त होते-होते रात के ग्यारह बज गये। वह व्यक्ति जब भी बीच में उठकर जाने लगता तो मैं मुरारजी की दुहाई देकर उसे रोक देता। उसने अंत में ऊब कर यह भी कहा कि इतना महत्त्वपूर्ण कार्य तो है नहीं, जब इतने दिनों से टलता आ रहा है तो दूसरे दिन के लिए टाल देने में क्या हानि है, परंतु मुझ पर तो मुरारजी का भूत सवार था। मैंने कहा, मुझे आज ही अपनी सम्मति लिखकर देनी है। अंत में, रात के करीब साढ़े ग्यारह बजे मैं होटल से उस व्यक्ति को लेकर अपने घर पर आया। सीढ़ी के किवाड़ बंद थे। मैंने बारबार घंटी बजाई परंतु किसीने नहीं सुनी। गर्मियों के दिन थे। मेरी पत्नी और बच्चे, ग्रीष्म ऋतु के कारण सभी तीसरे तल्ले की छत पर गहरी नींद में सोये थे अतः कमरे में बजनेवाली घंटी की आवाज वे नहीं सुन सकते थे। पुनः मैं अपने मित्र के साथ होटल में जाकर उसकी सीढ़ियों से भवन के होटल के उस भाग की छत पर गया जहाँ से दीवाल लाँघकर मैं अपने मकान के तीसरे तल्ले पर जा सकता था। इस प्रकार मैं अपने मकान के तीसरे तल्ले में दूसरे मार्ग से पहुँच गया और वहाँ से पुकार कर अपनी पत्नी

को बुलाया। वह छत से तीसरे तल्ले पर आयी तो मैंने उससे वह पुस्तक माँगी जिस पर मुझे सम्मति देनी थी। उसने कहा कि वह तो दूसरे तल्ले के हॉल में होगी। रात के क़रीब बारह बज चुके थे और सम्मति लेनेवाला बारबार इस कार्य को अगले दिन के लिए स्थगित करने और अपने घर लौट जाने का आग्रह कर रहा था। परंतु मैंने कहा कि मुझे मुरारजी की पद्धति पर चलना है और आज ही इस कार्य को निपटाना है। 6-7 मिनट के काम को टालते महीनों हो गये। लाल फीताशाही में यही तो होता है। मेरी पत्नी तो नींद से उठकर आयी थी अतः मैं ही अपने मित्र को लेकर नीचे के तल्ले पर चला गया क्योंकि सम्मति के लिए दी गयी पुस्तक, सादा कागज और कलम वहीं उपलब्ध हो सकते थे। वहाँ हॉल में पहुँचने पर मैंने देखा कि बगल के कमरे से बत्ती का प्रकाश आ रहा है। मैंने इसे अपनी पत्नी की लापरवाही समझा और बत्ती बुझाने का निश्चय किया। हॉल में से भी एक द्वार उस कमरे में खुलता था जिसकी छड़ में से बिजली का प्रकाश आ रहा था। मैंने उस द्वार का ताला खोलकर अपने मित्र से कहा कि वह जाकर बत्ती बुझा दे। वह बुझाने गया तो उसे किसी व्यक्ति की छाया दिखाई दी। उसने मुझसे कहा कि कमरे में कोई व्यक्ति छिपा है, ऐसा लगता है। मैं चौंक गया क्योंकि उसी कमरे के अंदर की कोठरी में एक तिजोरी में सारे स्वर्णाभूषण बंद थे। उस कमरे का दूसरा मुख्य द्वार सीढ़ी की ओर से था। मैंने सीढ़ीवाले द्वार के पास खड़े होकर उस मित्र को हॉलवाले द्वार से उस कमरे में भेजा। वह ज्यों ही अंदर पहुँचा तो वह छिपा हुआ व्यक्ति सीढ़ीवाले द्वार से निकलकर भागा। यद्यपि उस द्वार पर भी ताला था पर वह उसे खोलने में सफल हो गया था और उसी मार्ग से अंदर गया था। वह मेरे सामने से भागा परंतु मैं उसे पकड़ने का साहस नहीं कर सका, केवल चोर-चोर चिल्लाया। वह सीढ़ियों से उतर कर नीचे की ओर भागा। उसी समय मेरे नीचे के तल्ले का एक किरायेदार पानी पीने को उठा था और सीढ़ी के पास की नल से पानी ले रहा था। उसने सीढ़ी से एक व्यक्ति को तेजी से उतरते देखा और चोर-चोर की आवाज सुनी तो लपक कर उसको पकड़ लिया। तब तक महल्ले का पहरेदार भी आ गया। उस व्यक्ति के पास टॉर्च, चाबियों का बडा गुच्छा और लोहे को रगड़कर ताले में फिट करने के लिए रेती आदि के सामान मिले। उस चोर को, यथोचित मरम्मत करके, पुलिस में दे दिया गया।

जिस दिन यह घटना घटी उसके एक दिन पहले ही बहुत से और भी सोने के आभूषण बैंक से लाकर मैंने उस कोठरी में रख दिये थे। पहले के सारे

आभूषण तो थे ही जिनके प्रलोभन से वह चोर आया था। इस प्रकार यदि वह सफल हो जाता तो मेरी सारी चल संपत्ति समाप्त हो जाती क्योंकि मैं आवश्यकतानुसार उन्हींकी सहायता से छोटे बड़े धंधे करता रहता था। मुरारजी देसाई का अनुकरण करने की धुन पकड़कर रात के बारह बजे अपनी पत्नी और मित्र के बारबार मना करने पर भी एक सामान्य-से कार्य को निपटाने के लिए, जिसे मैं कई महीनों से टालता आ रहा था, यदि मैं पुस्तक लाने को नीचे के तल्ले में नहीं आता तो वह चोर अपना कार्य पूरा कर लेता क्योंकि हम सभी गर्मी की वजह से, ऊपर चौथे तल्ले की छत पर चैन से सोते रहते और हमें उसके कार्य-कलाप का कुछ पता ही नहीं चलता। उसे रात भर का पूरा अवकाश प्राप्त था। पुस्तक को लाकर उस पर सम्मति लिखने का कार्य तो एक निमित्त मात्र था, क्योंकि मैं कई महीनों से उसे टालता आ रहा था और सम्मति माँगनेवाला भी बारबार उसे टाल देने का आग्रह कर रहा था। क्या ईश्वर ने ही मेरे हृदय में बैठकर मुरारजी की कार्यप्रणाली का अनुकरण करने की वह प्रेरणा मुझे नहीं दी थी जिससे मेरी संपत्ति की रक्षा हो सकी। उस चोर ने रात में ही आकर दूसरे तल्ले के शौचालय में अपने को बंद कर लिया था इसलिए मेरे भवन में घुसने का मुख्य दरवाजा, रात में बंद कर दिये जाने पर भी, उसे अंदर आने से रोक नहीं पाया था। मैंने यहाँ अमेरिका में देखा है कि आफिसों में जो शौचालय रहता है उसमें ताला बंद रहता है और आवश्यकता पड़ने पर चाबी माँगकर ही उसका उपयोग किया जाता है। उपयोग करने के बाद चाबी लौटानी होती है और उस द्वार को बंद करते ही उसमें स्वतः ताला लग जाता है। आफिस बंद करते समय शौचालय की जाँच भी कर ली जाती है। इस घटना के बाद मुरारजी की कार्य-प्रणाली का न तो मुझे फिर कभी स्मरण ही हुआ और न मैंने उसका फिर कभी अनुसरण ही किया। वह तो उस अदृश्य सत्ता ने मेरे स्वर्ण-भंडार की रक्षा का एक निमित्त रचा था।

जो भी कार्य होता है उसके लिए कारण और संयोग तो ढूँढे ही जा सकते हैं परंतु मैं तो ऐसी घटनाओं को ईश्वर की कृपा और पूर्वकृत पुण्यकर्मों का प्रभाव ही मानता हूँ।

इसके विपरीत एक दूसरा उदाहरण भी है जिसमें सारे संयोग उल्टे जुड़ गये थे और मुझे हानि उठानी पड़ी थी परंतु वह हानि इतनी छोटी थी कि थोडा मानसिक आघात देने के सिवा उससे मेरी आर्थिक स्थिति पर कोई प्रभाव नहीं पड़नेवाला था। मेरे और मेरी पत्नी की अनुपस्थिति में एक महिला प्रोफेसर दूसरे नगर से मेरे घर पर आकर ठहर गयी। मेरी पुस्तक **उषा,** बी. ए. के पाठ्यक्रम

मे रहने से अक्सर प्रोफेसर-गण मेरे यहाँ आते रहते थे। मेरे छोटे पुत्र ने उस महिला का अत्यंत आदर-सत्कार किया और उसे रहने के लिए दुतल्ले का वही कमरा दे दिया जिसमें ऊपर वर्णित कोठरी थी। मैं और मेरी पत्नी जब प्रतापगढ़ से लौटे तो वह महिला एक अन्य प्रोफेसर के साथ 10-15 दिनों से वहाँ ठहरी हुई थी। वह अन्य प्रोफेसर उसका पति नहीं था यद्यपि मेरा पुत्र यही समझता था, अन्यथा दोनों को एक ही कमरे में वह कैसे स्थान दे सकता था। मैं जब आया तो वह दूसरा प्रोफेसर तुरत विदा हो गया। मेरी पत्नी प्रतापगढ़ से चार मोती की चूड़ियाँ और एकाध अन्य आभूषण गया लायी थी जिसे उसने कमरे की कोठरी खोलकर तिजोरी के ऊपर ही रख दिया था। कोठरी में एक मामूली-सा ताला लगा था क्योंकि उसमें जो भी सामान रहता था, उसकी तिजोरी में बंद रहता था। मेरी पत्नी जो सामान लायी थी उसका मुझे पता नहीं था, न मैं यही जानता था कि कोठरी में कोई आभूषण तिजोरी से बाहर भी पड़ा है। मेरे आने के बाद उस महिला का पति भी उसे लेने आया। उनका कार्य पूरा हो चुका था परंतु उन्होंने एक दिन और रुकने का निश्चय किया। उसी दौरान लगता है उन दोनों ने मिलकर चाबियाँ खरीदीं और रात में कोठरी खोलकर वे गहने निकाल लिए। हम लोग तो बगल के हॉल में सो रहे थे क्योंकि पहले से वह महिला उस बगल के कमरे में ठहरी हुई थी। उसने मेरी पत्नी को कोठरी खोलकर सामान रखते भी अवश्य देख लिया होगा। जो भी हो, उसके जाने के बाद मेरी पत्नी ने सोचा कि वे चूड़ियाँ और अन्य आभूषण वह मुझे दिखाये जो मेरे पुत्र की सगाई हो जाने पर उसकी होनेवाली बहू के लिए वह लायी थी। उसने कमरे में जाकर कोठरी खोली। आभूषण एक रुमाल में लिपटे सामने ही रक्खे गये थे। रुमाल गायब था और उसके साथ ही वे आभूषण भी। तुरत खलबली मच गयी। मेरा पुत्र उक्त महिला के घर पर पटना भी गया। परंतु वह साफ इन्कार कर गयी। उसका पिता जो एक सेवानिवृत्त पुलिस अधिकारी था, उसे लेकर आया और स्वयं जाँच करने के बाद उसने कहा कि वे गहने मेरी पुत्री और दामाद, जो उस कमरे में ठहरे थे, उनके अतिरिक्त कोई दूसरा नहीं ले जा सकता था। वह महिला क्या बोलती ! स्वीकार कर के सामान लौटाना उसके वश की बात नहीं थी। मेरे पुत्र ने बाद में मुझ यह बताया कि 5-7 दिन जिस अन्य प्रोफेसर के साथ वह ठहरी थी और जिसे उसने उसका पति समझ रक्खा था वह कोई दूसरा ही व्यक्ति था। उसके पति के आने पंर ही उसे इस बात का पता चला। ऐसी भ्रष्ट-चरित्र की स्त्री से, चाहे वह उच्चशिक्षा प्राप्त प्रोफेसर ही क्यों न हो, और क्या आशा की जा सकती थी ! दुबारा जब वह अपने पिता

के साथ आयी थी तो उसका पति भी साथ में था। उस महिला की, अपने प्रेमी के साथ एक सप्ताह से ऊपर मेरे भवन में एक साथ सोने की बात मैंने उस महिला के पति को नहीं बतायी क्योंकि वह एक प्रकार का प्रतिशोध होता जो मैं नहीं लेना चाहता था। **भारी मार कबीर की कि चित से दिया बिसार।**

उपर्युक्त घटना में भी सारे संयोग ही थे जो एक साथ जुड़ गये थे। इस हानि से मुझे चेतावनी दी गयी थी कि मैं सतर्क रहूँ। मैंने अपने पुत्र को भी कहा कि भगवान ने केवल तुम्हारी शिक्षा के लिए यह छोटा-सा कटु-अनुभव तुम्हें दिया हैं। 15 दिनों तक एक अनजान अतिथि को घर के अंतःकक्ष में ठहराकर और भोजन-पान की व्यवस्था करके उसने जिस अतिथि-सेवा का परिचय दिया था, वह अनुचित नहीं था, केवल भविष्य में उसे अपनी स्वाभाविक सेवा-वृत्ति में उचित सतर्कता भी बरतनी चाहिए। गीता के साथ-साथ चाणक्य-नीति और हितोपदेश की शिक्षा भी याद रखनी चाहिए। तभी व्यावहारिक जगत में मनुष्य सफलता के साथ जीवन-निर्वाह कर सकता है। ईशोपनिषद में भी लिखा है—**अविद्यया मृत्युं तीर्त्वा विद्ययामृतमश्नुते।**